Chapter इकसठ

बलराम द्वारा रुक्मी का वध

इस अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण के पुत्रों, पौत्रों तथा अन्य सन्तानों की सूची दी गई है। इसमें इसका भी वर्णन है कि बलराम ने अनिरुद्ध के विवाहोत्सव के समय रुक्मी को किस तरह मारा और

कृष्ण ने किस तरह अपने पुत्रों तथा पुत्रियों के विवाह की व्यवस्था की।

श्रीकृष्ण के बारे में पूरी सच्चाई न समझने के कारण उनकी प्रत्येक पत्नी यही सोचती थी कि चूँकि वे उसके महल में निरन्तर रहते हैं अतएव वही उनकी प्रिय पत्नी है। वे सभी भगवान् के सौन्दर्य एवं अपने साथ उनके मधुर वार्तालाप पर मुग्ध थीं किन्तु वे न तो अपनी भौंहों के नचाने से या अन्य किसी साधन से उनके मन को चलायमान कर पाती थीं। श्रीकृष्ण जो कि ब्रह्मा जैसे देवताओं के लिए अगम्य हैं, उन्हें अपने पति के रूप में पाकर भगवान् की सारी रानियाँ उनके साथ रहने के लिए सदा उत्सुक रहती थीं। इस तरह लाखों दासियों के होते हुए भी वे स्वयं उनकी छोटी से छोटी सेवा तक करती थीं।

भगवान् की प्रत्येक पत्नी से दस दस पुत्र हुए जिनके भी अनेक पुत्र तथा पौत्र थे। रुक्मी की पुत्री रुक्मावती के पति प्रद्युम्न से उसे अनिरुद्ध उत्पन्न हुआ। यद्यपि श्रीकृष्ण ने रुक्मी का अनादर किया था किन्तु अपनी बहन को खुश करने के लिए रुक्मी ने अपनी पुत्री का विवाह प्रद्युम्न के साथ कर दिया और पौत्री का विवाह अनिरुद्ध के साथ कर दिया। कृतवर्मा के पुत्र बली ने रुक्मिणी की पुत्री चारुमती के साथ विवाह किया।

अनिरुद्ध के विवाह में बलदेव, श्रीकृष्ण तथा अन्य यादव भोजकट नगर में रुक्मी के महल में गये। विवाह के बाद रुक्मी ने बलदेव को चौसर खेलने के लिए ललकारा। पहली बाजी में रुक्मी ने बलदेव को हरा दिया अत: कलिंगराज उन पर हँसा जिससे उसके सारे दाँत दिखने लगे। अगली बाजी बलदेव जीत गये किन्तु रुक्मी ने अपनी हार नहीं मानी। तभी आकाशवाणी हुई कि बलदेव जीते हैं। किन्तु रुक्मी ने दुष्ट राजाओं के बहकावे में आकर बलदेव का अपमान यह कहकर किया कि वे गाय चराने में तो पटु हैं किन्तु चौसर खेलने में शून्य हैं। इस तरह अपमानित होने पर बलदेव ने अपनी गदा से रुक्मी पर प्रहार किया जिससे वह मर गया। कलिंगराज ने भागना चाहा किन्तु बलदेव ने उसे पकड़ लिया और उसके सारे दाँत तोड़ दिये। तत्पश्चात् अन्य अपराधी-राजा सभी दिशाओं में भाग गये। उनकी बाहें, जाँघें तथा सिर बलदेव के वारों से क्षत-विक्षत हो चुके थे और उनसे काफी खून निकल रहा था। श्रीकृष्ण ने अपने साले की मृत्यु पर न तो सहमति प्रकट की न असहमति क्योंकि उन्हें भय था कि इससे रुक्मिणी या बलदेव से उनके प्रेमपूर्ण सम्बन्ध छिन्न हो सकते हैं।

इसके बाद बलदेव तथा अन्य यादवों ने अनिरुद्ध तथा उसकी पत्नी को सुन्दर रथ पर बैठाया और

द्वारका के लिए रवाना हो गये।

श्रीशुक उवाच
एकैकशस्ताः कृष्णस्य पुत्रान्दशदशाबआः ।
अजीजनन्ननवमान्पितुः सर्वात्मसम्पदा ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एक-एकशः—एक एक करके; ताः—वे; कृष्णस्य—कृष्ण के; पुत्रान्—पुत्रों को; दश-दश—हर एक के दस दस; अबलाः—पत्नियों ने; अजीजनन्—जन्म दिया; अनवमान्—उत्तम; पितुः—उनके पिता का; सर्व—सारा; आत्म—निजी; सम्पदा—ऐश्वर्य।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : भगवान् कृष्ण की हर पत्नी से दस दस पुत्र हुए जो अपने पिता से कम नहीं थे और जिनके पास अपने पिता का सारा निजी ऐश्वर्य था।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण के १६,१०८ पत्नियाँ थीं और इस श्लोक के अनुसार कृष्ण के १,६१,०८० पुत्र थे।

गृहादनपगं वीक्ष्य राजपुत्र्योऽच्युतं स्थितम् ।
प्रेष्ठं न्यमंसत स्वं स्वं न तत्तत्त्वविदः स्त्रियः ॥ २ ॥

शब्दार्थ

गृहात्—अपने महलों से; अनपगम्—कभी बाहर न जाते; वीक्ष्य—देखकर; राज-पुत्र्यः—राजाओं की पुत्रियाँ; अच्युतम्—भगवान् कृष्ण को; स्थितम्—रहते हुए; प्रेष्ठम्—अत्यन्त प्रिय; न्यमंसत—उन्होंने विचार किया; स्वम् स्वम्—अपने अपने; न—नहीं; तत्—उसके विषय में; तत्त्व—सचाई; विदः—जानने वाली; स्त्रियः—स्त्रियाँ।

चूँकि इनमें से हर राजकुमारी यह देखती थीं कि भगवान् अच्युत कभी उसके महल से बाहर नहीं जाते अतएव हर एक अपने को भगवान् की प्रिया समझती थी। ये स्त्रियाँ उनके विषय में पूरी सच्चाई नहीं समझ पाईं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर लिखते हैं कि भगवान् कृष्ण अपनी पत्नियों की अनुमति से ही महलों से बाहर जाते थे इसलिए हर पत्नी अपने को उनकी परम-प्रिया मानती थी।

चार्वब्जकोशवदनायतबाहुनेत्र-
सप्रेमहासरसवीक्षितवल्गुजल्पैः ।
सम्मोहिता भगवतो न मनो विजेतुं
स्वैर्विभ्रमैः समशकन्वनिता विभूम्नः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

चारु—सुन्दर; अब्ज—कमल के; कोश—कोश के समान; वदन—मुख से; आयत—विस्तृत; बाहु—अपनी बाहुओं से; नेत्र—तथा आँखों से; स-प्रेम—प्रेमपूर्ण; हास—हास्य के; रस—रस में; वीक्षित—चितवनों से; वल्गु—आकर्षक; जल्पैः—तथा अपनी बातों से; सम्मोहिताः—पूर्णतया मोहित; भगवतः—भगवान् के; न—नहीं; मनः—मन के; विजेतुम्—जीतने के लिए; स्वैः—अपने; विभ्रमैः—प्रलोभनों से; समशकन्—समर्थ थीं; वनिताः—स्त्रियाँ; विभूम्नः—परम पूर्ण का।

भगवान् की पत्नियाँ उनके कमल जैसे सुन्दर मुख, उनकी लम्बी बाँहों तथा बड़ी बड़ी आँखों, हास्य से पूर्ण उनकी प्रेममयी चितवनों तथा अपने साथ उनकी मनोहर बातों से पूरी तरह मोहित थीं। किन्तु ये स्त्रियाँ अपने समस्त आकर्षण के होते हुए भी सर्वशक्तिमान भगवान् के मन को नहीं जीत पाईं।

तात्पर्य : पिछले श्लोक में कहा गया है कि भगवान् कृष्ण की रानियाँ भगवान् के सत्य को नहीं समझ सकीं। इसी सत्य की विवेचना इस श्लोक में की गई है। भगवान् सर्वशक्तिमान, अनन्त ऐश्वर्य से युक्त अपने में पूर्ण हैं।

स्मायावलोकलवदर्शितभावहारि-
भ्रूमण्डलप्रहितसौरतमन्त्रशौण्डैः ।
पत्न्यस्तु शोडशसहस्रमनङ्गबाणै-
र्यस्येन्द्रियं विमथितुम्करणैर्न शेकुः ॥ ४॥

शब्दार्थ

स्माय—छिपी हँसी से; अवलोक—चितवन का; लव—रंच-भर भी; दर्शित—प्रदर्शित किया; भाव—भावों से; हारि—मोहक; भ्रू—भौंहों के; मण्डल—गोलाकृति से; प्रहित—भेजती थीं; सौरत—काम कला; मन्त्र—संदेशों का; शौण्डैः—निर्भीकता की अभिव्यक्तियों से; पत्न्यः—पत्नियाँ; तु—लेकिन; षोडश—सोलह; सहस्रम्—हजार; अनङ्ग—कामदेव के; बाणैः—बाणों से; यस्य—जिसकी; इन्द्रियम्—इन्द्रियाँ; विमथितुम्—उद्वेलित करने के लिए; करणैः—तथा (अन्य) साधनों से; न शेकुः—असमर्थ थीं।

इन सोलह हजार रानियों की टेढ़ी भौंहें उनके गुप्त मनोभावों को लजीली हास्ययुक्त तिरछी चितवनों से व्यक्त करती थीं। इस तरह उनकी भौंहें निडर होकर माधुर्य सन्देश भेजती थीं। तो भी कामदेव के इन बाणों तथा अन्य साधनों से वे सब भगवान् कृष्ण की इन्द्रियों को उद्वेलित नहीं बना सकीं।

इत्थं रमापतिमवाप्य पतिं स्त्रियस्ता
ब्रह्मादयोऽपि न विदुः पदवीं यदीयाम् ।
भेजुर्मुदाविरतमेधितयानुराग-
हासावलोकनवसङ्गमलालसाद्यम् ॥ ५॥

शब्दार्थ

इत्थम्—इस प्रकार से; रमा-पतिम्—लक्ष्मी के पति को; अवाप्य—प्राप्त करके; पतिम्—पति रूप में; स्त्रियः—स्त्रियाँ; ताः—वे; ब्रह्म-आदयः—ब्रह्मा तथा अन्य देवता; अपि—भी; न विदुः—नहीं जानते; पदवीम्—प्राप्त करने के साधन; यदीयाम्—जिनको; भेजुः—भाग लिया; मुदा—हर्षपूर्वक; अविरतम्—निरन्तर; एधितया—वर्धित; अनुराग—प्रेमाकर्षण; हास—हँसी; अवलोक—चितवन; नव—नया; सङ्गम—घनिष्ठ साथ की; लालस—उत्सुकता; आद्यम्—इत्यादि।

इस तरह इन स्त्रियों ने लक्ष्मीपति को अपने पति रूप में प्राप्त किया यद्यपि ब्रह्मा जैसे बड़े बड़े देवता भी उन तक पहुँचने की विधि नहीं जानते। प्रेम में निरन्तर वृद्धि के साथ वे उनके प्रति अनुराग का अनुभव करतीं, उनसे हास्ययुक्त चितवनों का आदान-प्रदान करतीं, नित नवीन घनिष्ठता के साथ उनसे समागम की लालसा करती हुई अन्यान्य अनेक विधियों से रमण करतीं।

तात्पर्य : इस श्लोक में रानियों द्वारा अनुभूत भगवान् कृष्ण के प्रति प्रगाढ़ माधुर्य आकर्षण का वर्णन है।

प्रत्युद्गमासनवरार्हणपादशौच-
ताम्बूलविश्रमणवीजनगन्धमाल्यैः ।
केशप्रसारशयनस्नपनोपहार्यैः
दासीशता अपि विभोर्विदधुः स्म दास्यम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

प्रत्युद्गम—पास जाकर; आसन—आसन प्रदान करके; वर—उच्च कोटि का; अर्हण—पूजा; पाद—उसके पाँव; शौच—मार्जन; ताम्बूल—पान (की भेंट); विश्रमण—(उनके पाँव दबाकर) विश्राम करने में सहायता करते हुए; वीजन—पंखा झलना; गन्ध—सुगंधित वस्तुएँ (भेंट करके); माल्यैः—तथा फूल की मालाओं से; केश—उनके बाल; प्रसार—सँवार कर; शयन—बिछौने की व्यवस्था; स्नपन—स्नान कराकर; उपहार्यैः—तथा भेंटें प्रदान करके; दासी—नौकरानियाँ; शताः—सैकड़ों; अपि—यद्यपि; विभोः—सर्वशक्तिमान प्रभु की; विदधुः-स्म—सम्पन्न किया; दास्यम्—सेवा।

यद्यपि भगवान् की रानियों में से हर एक के पास सैकड़ों दासियाँ थीं, फिर भी वे विनयपूर्वक उनके पास जाकर, उन्हें आसन देकर, उत्तम सामग्री से उनकी पूजा करके, उनके चरणों का प्रक्षालन करके तथा दबाकर, उन्हें खाने के लिए पान देकर, उन्हें पंखा झलकर, सुगन्धित चन्दन का लेप करके, फूल की मालाओं से सजाकर, उनके केश सँवार कर, उनका बिस्तर ठीक करके, उन्हें नहलाकर तथा उन्हें नाना प्रकार की भेंटें देकर स्वयं उनकी सेवा करती थीं।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी बतलाते हैं कि शुकदेव गोस्वामी भगवान् कृष्ण तथा उनकी रानियों की दिव्य लीलाओं का वर्णन करने के लिए इतने उत्सुक रहते थे कि उन्होंने इन श्लोकों की पुनरावृत्ति कर दी है। उदाहरणार्थ, इस अध्याय का श्लोक ५ इसी स्कंध के उनसठवें अध्याय के श्लोक ४४ के

ही समान है और श्लोक ६ उसी अध्याय के श्लोक ४५ के समान है। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि *वरार्हण* शब्द सूचित करता है कि रानियों ने भगवान् को अंजुली भर फूल (*पुष्पाञ्जलि*) तथा अंजुली भर रत्न (*रत्नाञ्जलि*) भेंट किए।

तासां या दशपुत्राणां कृष्णस्त्रीणां पुरोदिताः ।
अष्टौ महिष्यस्तत्पुत्रान्प्रद्युम्नादीन्गृणामि ते ॥ ७॥

शब्दार्थ

तासाम्—उनमें से; याः—जो; दश—दस; पुत्राणाम्—पुत्रों के; कृष्ण-स्त्रीणाम्—कृष्ण की स्त्रियों के; पुरा—पहले; उदिताः—उल्लिखित; अष्टौ—आठ; महिष्यः—पटरानियाँ; तत्—उनके; पुत्रान्—पुत्रों को; प्रद्युम्न-आदीन्—प्रद्युम्न आदि; गृणामि—मैं कहूँगा; ते—तुम्हारे लिए।

भगवान् कृष्ण की पत्नियों में से हर एक के दस दस पुत्र थे। उन पत्नियों में से आठ पटरानियाँ थीं, इसका उल्लेख मैं पहले कर चुका हूँ। अब मैं तुम्हें उन आठों रानियों के पुत्रों के नाम बतलाऊँगा जिनमें प्रद्युम्न मुख्य थे।

चारुदेष्णः सुदेष्णश्च चारुदेहश्च वीर्यवान् ।
सुचारुश्चारुगुप्तश्च भद्रचारुस्तथापरः ॥ ८॥
चारुचन्द्रो विचारुश्च चारुश्च दशमो हरेः ।
प्रद्युम्नप्रमुखा जाता रुक्मिण्यां नावमाः पितुः ॥ ९॥

शब्दार्थ

चारुदेष्णः सुदेष्णः च—चारुदेष्ण तथा सुदेष्ण; चारुदेहः—चारुदेह; च—तथा; वीर्य-वान्—शक्तिशाली; सुचारुः चारुगुप्तः च—सुचारु तथा चारुगुप्त; भद्रचारुः—भद्रचारु; तथा—भी; अपरः—दूसरा; चारुचन्द्रः विचारः च—चारुचन्द्र तथा विचारु; चारः—चारु; च—भी; दशमः—दसवाँ; हरेः—भगवान् हरि द्वारा; प्रद्युम्न-प्रमुखाः—प्रद्युम्न इत्यादि; जातः—उत्पन्न; रुक्मिण्याम्—रुक्मिणी के; न—नहीं; अवमाः—निकृष्ट, कम; पितुः—अपने पिता से।

महारानी रुक्मिणी का प्रथम पुत्र प्रद्युम्न था। उन्हीं के पुत्रों में चारुदेष्ण, सुदेष्ण, बलशाली चारुदेह, सुचारु, चारुगुप्त, भद्रचारु, चारुचन्द्र, विचारु तथा दसवाँ पुत्र चारु थे। भगवान् हरि के इन पुत्रों में से कोई भी अपने पिता से कम नहीं था।

भानुः सुभानुः स्वर्भानुः प्रभानुर्भानुमांस्तथा ।
चन्द्रभानुर्बृहद्भानुरतिभानुस्तथाष्टमः ॥ १०॥
श्रीभानुः प्रतिभानुश्च सत्यभामात्मजा दश ।
साम्बः सुमित्रः पुरुजिच्छतजिच्च सहस्रजित् ॥ ११॥
वियश्चित्रकेतुश्च वसुमान्द्रविडः क्रतुः ।

जाम्बवत्याः सुता ह्येते साम्बाद्याः पितृसम्मताः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

भानुः सुभानुः स्वर्भानुः—भानु, सुभानु तथा स्वर्भानु; प्रभानः भानुमान्—प्रभानु तथा भानुमान; तथा—भी; चन्द्रभानुः बृहद्भानुः—चन्द्रभानु तथा बृहद्भानु; अतिभानुः—अतिभानु; तथा—भी; अष्टमः—आठवाँ; श्रीभानुः—श्रीभानु; प्रतिभानुः—प्रतिभानु; च—तथा; सत्यभामा—सत्यभामा के; आत्मजाः—पुत्र; दश—दस; साम्बः सुमित्रः पुरुजित् शतजित् च सहस्रजित्—साम्ब, सुमित्र, पुरुजित, शतजित तथा सहस्रजित; विजयः चित्रकेतुः च—विजय तथा चित्रकेतु; वसुमान् द्रविडः क्रतुः—वसुमान, द्रविड़ तथा क्रतु; जाम्बवत्याः—जाम्बवती के; सुताः—पुत्र; हि—निस्सन्देह; एते—ये; साम्ब-आद्याः—साम्ब आदि; पितृ—उनके पिता के; सम्मताः—प्यारे।

सत्यभामा से दस पुत्र थे—भानु, सुभानु, स्वर्भानु, प्रभानु, भानुमान, चन्द्रभानु, बृहद्भानु, अतिभानु (आठवाँ), श्रीभानु तथा प्रतिभानु। जाम्बवती के पुत्रों के नाम थे—साम्ब, सुमित्र, पुरुजित, सतजित, सहस्त्रजित, विजय, चित्रकेतु, वसुमान्, द्रविड़ तथा क्रतु। साम्ब आदि ये दसों अपने पिता के अत्यन्त लाड़ले थे।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी ने इस श्लोक में आए *पितृसम्मताः* सामासिक पद का ''अपने पिता द्वारा अत्यधिक सम्मानित'' अर्थ किया है। उक्त शब्द यह भी बतलाता है कि ये पुत्र, पूर्वोक्त पुत्रों की ही तरह अपने पिता यशस्वी कृष्ण के समान माने जाते थे।

वीरश्चन्द्रोऽश्वसेनश्च चित्रगुर्वेगवान्वृषः ।
आमः शङ्कुर्वसुः श्रीमान्कुन्तिर्नाग्नजितेः सुताः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

वीरः चन्द्रः अश्वसेनः च—वीर, चन्द्र तथा अश्वसेन; चित्रगुः वेगवान् वृषः—चित्रगु, वेगवान् तथा वृष; आमः शङ्कुः वसुः—आम, शंकु तथा वसु; श्री-मान्—ऐश्वर्यशाली; कुन्तिः—कुन्ति; नाग्नजितेः—नाग्नजिती के; सुताः—पुत्र।

नाग्नजिती के पुत्र थे वीर, चन्द्र, अश्वसेन, चित्रगु, वेगवान्, वृष, आम, शंकु, वसु तथा ऐश्वर्यशाली कुन्ति।

श्रुतः कविर्वृषो वीरः सुबाहुर्भद्र एकलः ।
शान्तिर्दर्शः पूर्णमासः कालिन्द्याः सोमकोऽवरः ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

श्रुतः कविः वृषः वीरः—श्रुत, कवि, वृष तथा वीर; सुबाहुः—सुबाहु; भद्रः—भद्र; एकलः—इनमें से एक; शान्तिः दर्शः पूर्णमासः—शान्ति, दर्श तथा पूर्णमास; कालिन्द्याः—कालिन्दी के; सोमकः—सोमक; अवरः—सबसे छोटा।

श्रुत, कवि, वृष, वीर, सुबाहु, भद्र, शान्ति, दर्श तथा पूर्णमास कालिन्दी के पुत्र थे। उनका सबसे छोटा पुत्र सोमक था।

प्रघोषो गात्रवान्सिंहो बलः प्रबल ऊर्धगः ।
माद्र्याः पुत्रा महाशक्तिः सह ओजोऽपराजितः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

प्रघोषः गात्रवान् सिंहः—प्रघोष, गात्रवान तथा सिंह; बलः प्रबलः ऊर्धगः—बल, प्रबल तथा ऊर्धग; माद्र्याः—माद्रा के; पुत्राः—पुत्र; महाशक्तिः सहः ओजः अपराजितः—महाशक्ति, सह, ओज तथा अपराजित।

माद्रा के पुत्र थे प्रघोष, गात्रवान, सिंह, बल, प्रबल, ऊर्धग, महाशक्ति, सह, ओज तथा अपराजित।

तात्पर्य : माद्रा का दूसरा नाम लक्ष्मणा भी है।

वृको हर्षोऽनिलो गृध्रो वर्धनोन्नाद एव च ।
महांसः पावनो वह्निर्मित्रविन्दात्मजाः क्षुधिः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

वृकः हर्षः अनिलः गृध्रः—वृक, हर्ष, अनिल तथा गृध्र; वर्धन-उन्नादः—वर्धन तथा उन्नाद; एव च—भी; महांसः पावनः वह्निः—महांस, पावन तथा वह्नि; मित्रविन्दा—मित्रविन्दा के; आत्मजाः—पुत्र; क्षुधिः—क्षुधि।

मित्रविन्दा के पुत्रों के नाम थे वृक, हर्ष, अनिल, गृध्र, वर्धन, उन्नाद, महांस, पावन, वह्नि तथा क्षुधि।

सङ्ग्रामजिद्बृहत्सेनः शूरः प्रहरणोऽरिजित् ।
जयः सुभद्रो भद्राया वाम आयुश्च सत्यकः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

सङ्ग्रामजित् बृहत्सेनः—संग्रामजित तथा बृहत्सेन; शूरः प्रहरणः अरिजित्—शूर, प्रहरण तथा अरिजित; जयः सुभद्रः—जय तथा सुभद्र; भद्रायाः—भद्रा (शैब्या) के; वामः आयुश् च सत्यकः—वाम, आयुर् तथा सत्यक।

भद्रा के पुत्र थे संग्रामजित, बृहत्सेन, शूर, प्रहरण, अरिजित, जय, सुभद्र, वाम, आयुर् तथा सत्यक।

दीप्तिमांस्ताम्रतप्ताद्या रोहिण्यास्तनया हरेः ।
प्रद्युम्नाच्चानिरुद्धोऽभूद्रुक्मवत्यां महाबलः ।
पुत्र्यां तु रुक्मिणो राजन्नाम्ना भोजकटे पुरे ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

दीप्तिमान् ताम्रतप्त-आद्याः—दीप्तिमान, ताम्रतप्त तथा अन्य; रोहिण्याः—रोहिणी (शेष १६ १०० रानियों में से प्रमुख); तनयाः—पुत्र; हरेः—भगवान् कृष्ण के; प्रद्युम्नात्—प्रद्युम्न से; च—तथा; अनिरुद्धः—अनिरुद्ध; अभूत्—उत्पन्न हुआ; रुक्मवत्याम्—रुक्मवती से; महा-बलः—अत्यन्त बलवान; पुत्र्याम्—पुत्री से; तु—निस्सन्देह; रुक्मिणः—रुक्मी की; राजन्—हे राजा (परीक्षित); नाम्ना—नामक; भोजकटे पुरे—भोजकट(रुक्मी के राज्य में) नगर में।

दीप्तिमान, ताम्रतप्त इत्यादि भगवान् कृष्ण द्वारा रोहिणी से उत्पन्न किये गये पुत्र थे। भगवान्

कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न ने रुक्मी की पुत्री रुक्मवती के गर्भ से शक्तिशाली अनिरुद्ध को जन्म दिया। हे राजन्, यह सब तब हुआ जब वे भोजकटक नगर में रह रहे थे।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण की आठ पटरानियाँ हैं—रुक्मिणी, सत्यभामा, जाम्बवती, नाग्नजिती, कालिन्दी, लक्ष्मणा, मित्रविन्दा तथा भद्रा। इन आठों के पुत्रों का वर्णन कर चुकने के बाद अब शुकदेव गोस्वामी अन्य १६ १०० रानियों के पुत्रों का सन्दर्भ देते हुए रोहिणी नामक प्रधानरानी के दो प्रमुख पुत्रों का उल्लेख करते हैं।

एतेषां पुत्रपौत्राश्च बभूवुः कोटिशो नृप ।
मातरः कृष्णजातीनां सहस्राणि च षोडश ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

एतेषाम्—इनके; पुत्र—पुत्र; पौत्राः—तथा पौत्र; च—तथा; बभूवुः—उत्पन्न हुए; कोटिशः—करोड़ों; नृप—हे राजा; मातरः—माताओं से; कृष्ण-जातीनाम्—भगवान् कृष्ण के वंशजों के; सहस्राणि—हजारों; च—तथा; षोडश—सोलह।

हे राजन्, कृष्ण के पुत्रों के पुत्रों तथा पौत्रों की संख्या करोड़ों में थी। सोलह हजार माताओं ने इस वंश को आगे बढ़ाया।

श्रीराजोवाच
कथं रुक्म्यरीपुत्राय प्रादाद्दुहितरं युधि ।
कृष्णेन परिभूतस्तं हन्तुं रन्ध्रं प्रतीक्षते ।
एतदाख्याहि मे विद्वन्द्विषोर्वैवाहिकं मिथः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—राजा ने कहा; कथम्—कैसे; रुक्मी—रुक्मी ने; अरि—अपने शत्रु के; पुत्राय—पुत्र को; प्रादात्—दिया; दुहितरम्—अपनी पुत्री को; युधि—युद्ध में; कृष्णेन—कृष्ण द्वारा; परिभूतः—पराजित; तम्—उसको (कृष्ण को); हन्तुम्—मारने के लिए; रन्ध्रम्—सुअवसर की; प्रतीक्षते—प्रतीक्षा कर रहा था; एतत्—यह; आख्याहि—कृपया बतलाइये; मे—मुझको; विद्वन्—हे विद्वान; द्विषोः—दो शत्रुओं के; वैवाहिकम्—विवाह का प्रबंध; मिथः—दोनों के बीच।

राजा परीक्षित ने कहा : रुक्मी ने कैसे अपने शत्रु के पुत्र को अपनी पुत्री प्रदान की? रुक्मी तो युद्ध में भगवान् कृष्ण द्वारा पराजित किया गया था और उन्हें मार डालने की ताक में था। हे विद्वान, कृपा करके मुझे बतलाइये कि ये दोनों शत्रु-पक्ष किस तरह विवाह के माध्यम से जुड़ सके।

अनागतमतीतं च वर्तमानमतीन्द्रियम् ।

विप्रकृष्टं व्यवहितं सम्यक्पश्यन्ति योगिनः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

अनागतम्—अभी घटित नहीं हुआ; अतीतम्—भूतकाल; च—भी; वर्तमानम्—वर्तमान; अतीन्द्रियम्—इन्द्रियों की सीमा से परे; विप्रकृष्टम्—सुदूर; व्यवहितम्—अवरुद्ध; सम्यक्—भलीभाँति; पश्यन्ति—देखते हैं; योगिनः—योगीजन।

जो अभी घटित नहीं हुआ तथा भूतकाल या वर्तमान की बातें जो इन्द्रियों के परे, सुदूर या भौतिक अवरोधों से अवरुद्ध हैं, उन्हें योगीजन भलीभाँति देख सकते हैं।

तात्पर्य : यहाँ पर राजा परीक्षित शुकदेव गोस्वामी को यह बतलाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं कि रुक्मी ने अपनी पुत्री भगवान् कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न को क्यों दी। परीक्षित बल देकर कहते हैं कि शुकदेव गोस्वामी जैसे महान् योगी हर बात को जानते हैं अतः वे इसे भी अवश्य जानते होंगे और उत्सुक राजा से इसे बतलाना चाहिए।

श्रीशुक उवाच

वृतः स्वयंवरे साक्षादनण्गोऽण्गयुतस्तया ।
राज्ञः समेतान्निर्जित्य जहारैकरथो युधि ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; वृतः—चुना हुआ; स्वयं-वरे—उसके स्वयंवर उत्सव में; साक्षात्—प्रकट; अनङ्गः—कामदेव; अङ्ग-यतः—अवतार; तया—उसके द्वारा; राज्ञः—राजाओं को; समेतान्—एकत्र; निर्जित्य—हराकर; जहार—ले गया; एक-रथः—केवल एक रथ का स्वामी; युधि—युद्ध में।

श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा : अपने स्वयंवर उत्सव में रुक्मावती ने स्वयं ही प्रद्युम्न को चुना, जो कि साक्षात् कामदेव थे। तब एक ही रथ पर अकेले लड़ते हुए प्रद्युम्न ने एकत्र राजाओं को युद्ध में पराजित किया और वे उसे हर ले गये।

यद्यप्यनुस्मरन्वैरं रुक्मी कृष्णावमानितः ।
व्यतरद्भागिनेयाय सुतां कुर्वन्स्वसुः प्रियम् ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

यदि अपि—यद्यपि; अनुस्मरन्—सदैव स्मरण करते हुए; वैरम्—अपनी शत्रुता; रुक्मी—रुक्मी; कृष्ण—कृष्ण द्वारा; अवमानितः—अपमानित; व्यतरत्—स्वीकृति दे दी; भागिनेयाय—अपनी बहन के बेटे को; सुताम्—अपनी पुत्री; कुर्वन्—करते हुए; स्वसुः—अपनी बहन का; प्रियम्—प्रसन्न करना।

यद्यपि रुक्मी कृष्ण के प्रति अपनी शत्रुता को सदैव स्मरण रखे रहा क्योंकि उन्होंने उसका अपमानित किया था किन्तु अपनी बहन को प्रसन्न करने के लिए उसने अपनी पुत्री का विवाह अपने भाञ्जे के साथ होने की स्वीकृति प्रदान कर दी।

तात्पर्य : यहाँ पर राजा परीक्षित के प्रश्न का उत्तर दिया गया है। अन्ततोगत्वा अपनी बहन रुक्मिणी को प्रसन्न करने के लिए रुक्मी ने प्रद्युम्न के साथ अपनी पुत्री का विवाह किये जाने की सहमति दे दी।

रुक्मिण्यास्तनयां राजन्कृतवर्मसुतो बली ।
उपयेमे विशालाक्षीं कन्यां चारुमतीं किल ॥ २४॥

शब्दार्थ

रुक्मिण्या:—रुक्मिणी की; तनयाम्—पुत्री को; राजन्—हे राजन्; कृतवर्म-सुत:—कृतवर्मा के पुत्र ने; बली—बली नामक; उपयेमे—विवाह लिया; विशाल—बड़े बड़े; अक्षीम्—नेत्रों वाली; कन्याम्—युवती को; चारुमतीम्—चारुमती नामक; किल—निस्सन्देह।

हे राजन्, कृतवर्मा के पुत्र बली ने रुक्मिणी की विशाल नेत्रों वाली तरुण कन्या चारुमती से विवाह कर लिया।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी बतलाते हैं कि भगवान् की प्रत्येक महारानी से एक एक पुत्री उत्पन्न हुई थी। यहाँ चारुमती के विवाह का उल्लेख इन सारी राजकुमारियों के विवाह का अप्रत्यक्ष सन्दर्भ है।

दौहित्रायानिरुद्धाय पौत्रीं रुक्म्याददाद्धरे: ।
रोचनां बद्धवैरोऽपि स्वसु: प्रियचिकीर्षया ।
जानन्नधर्मं तद्यौनं स्नेहपाशानुबन्धन: ॥ २५॥

शब्दार्थ

दौहित्राय—अपनी पुत्री के पुत्र; अनिरुद्धाय—अनिरुद्ध के लिए; पौत्रीम्—अपनी पौत्री को; रुक्मी—रुक्मी ने; आददात्—दे दिया; हरे:—भगवान् कृष्ण के; रोचनाम्—रोचना नामक; बद्ध—बँधा हुआ; वैर:—शत्रुता में; अपि—यद्यपि; स्वसु:—अपनी बहन; प्रिय-चिकीर्षया—प्रसन्न करने की इच्छा से; जानन्—जानते हुए; अधर्मम्—अधर्म को; तत्—वह; यौनम्—विवाह; स्नेह—स्नेह की; पाश—रस्सियों से; अनुबन्धन:—जिसका बन्धन।

रुक्मी ने अपनी पौत्री रोचना को अपनी कन्या के पुत्र अनिरुद्ध को दे दिया यद्यपि भगवान् हरि से उसकी घोर शत्रुता थी। इस विवाह को अधार्मिक मानते हुए भी रुक्मी स्नेह-बन्धन से बँधकर अपनी बहन को प्रसन्न करने का इच्छुक था।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी कहते हैं कि लौकिक मानदण्डों के अनुसार अपनी प्रिय पौत्री अपने कट्टर शत्रु के पौत्र को नहीं देनी चाहिए। इस तरह हमें यह आदेश प्राप्त होता है *द्विषदन्नं न भोक्तव्यं द्विषन्तं नैव भोजयेत्*—मनुष्य को चाहिए कि न तो शत्रु का भोजन करे, न शत्रु को खिलाये। इसके अतिरिक्त भी निषेध हैं—*अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्ममप्याचरेन्न तु*—स्वर्ग की यात्रा को रोकने वाले या

मानव समाज के लिए निन्द्य धार्मिक आदेशों का पालन नहीं करना चाहिए।

यहाँ यह इंगित कर दिया जाय कि भगवान् कृष्ण वास्तव में किसी के भी शत्रु नहीं हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (५.२९) में भगवान् कहते हैं—*सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति*—यह समझ कर कि मैं हर जीव का शुभचिन्तक मित्र हूँ मनुष्य शान्ति प्राप्त कर सकता है। यद्यपि भगवान् कृष्ण हरएक के मित्र हैं किन्तु रुक्मी इसे नहीं समझ सका और वह भगवान् कृष्ण को अपना शत्रु मानता रहा। फिर भी अपनी बहन के स्नेहवश उसने अपनी पौत्री का विवाह अनिरुद्ध के साथ कर दिया।

उपर्युक्त निषेध के बावजूद हमें ध्यान देना होगा कि आध्यात्मिक जीवन के मूलभूत सिद्धान्तों का परित्याग इसलिए नहीं करना चाहिए कि ऐसे सिद्धान्त आम जनता में लोकप्रिय नहीं हैं। जैसाकि भगवान् कृष्ण ने *भगवद्गीता* (१८.६६) में में कहा है—*सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।* आध्यात्मिक कर्तव्यों में परम कर्तव्य है भगवान् की शरणागति और वह कर्तव्य बाकी सभी आदेशों से ऊपर है। यही नहीं, इस युग में श्री चैतन्य महाप्रभु ने एक ऐसी शुद्ध विधि प्रदान की है, जो समस्त निष्ठावान व्यक्तियों को भगवान् की शरण में जाने के लिए आकृष्ट करेगी। चैतन्य महाप्रभु के कीर्तन, नृत्य, भोज तथा दर्शन की विवेचना वाली आनन्दपूर्ण विधि का पालन करके कोई भी व्यक्ति आनन्द तथा ज्ञानमय जीवन बिताने के लिए सुगमता से भगवद्धाम जा सकता है।

तो भी कोई यह दलील पेश कर सकता है कि कृष्णभावनामृत आन्दोलन के सदस्यों को पाश्चात्य देशों में उन उत्सवों या कार्यकलापों का अभ्यास नहीं करना चाहिये जो आम जनता को अप्रसन्न करते हों। इस पर हमारा उत्तर यह है कि यदि कृष्णभावनामृत आन्दोलन के कार्यकलापों को पाश्चात्य देशों के लोगों के समक्ष ठीक से रखा जाय तो वे इस महान् आध्यात्मिक संगठन की प्रशंसा करेंगे। जो लोग ईश्वर से विशेष रूप से द्वेष रखते हैं उन्हें किसी भी तरह का धार्मिक आन्दोलन नहीं भायेगा। चूँकि ऐसे लोग क्षुद्र पशुओं के तुल्य हैं अत: वे महान् कृष्णभावनामृत आन्दोलन में बाधक नहीं हो सकते जिस तरह ईर्ष्यालु रुक्मी भगवान् कृष्ण की शुद्ध लीलाओं में बाधक नहीं बन सका।

तस्मिन्नभ्युदये राजन्रुक्मिणी रामकेशवौ ।
पुरं भोजकटं जग्मु: साम्बप्रद्युम्नकादय: ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

तस्मिन्—उस; अभ्युदये—हर्ष की घड़ी में; राजन्—हे राजन्; रुक्मिणी—रुक्मिणी; राम-केशवौ—बलराम तथा कृष्ण; पुरम्—नगरी में; भोजकटम्—भोजकट; जग्मुः—गये; साम्ब-प्रद्युम्नक-आदयः—साम्ब, प्रद्युम्न तथा अन्य।

हे राजा, उस विवाह के उल्लासपूर्ण अवसर पर महारानी रुक्मिणी, बलराम, कृष्ण तथा कृष्ण के अनेक पुत्र, जिनमें साम्ब तथा प्रद्युम्न मुख्य थे, भोजकट नगर गये।

तस्मिन्निवृत्त उद्वाहे कालिङ्गप्रमुखा नृपाः ।
दृप्तास्ते रुक्मिणं प्रोचुर्बलमक्षैर्विनिर्जय ॥ २७॥
अनक्षज्ञो ह्ययं राजन्नपि तद्व्यसनं महत् ।
इत्युक्तो बलमाहूय तेनाक्षैरुक्म्यदीव्यत ॥ २८॥

शब्दार्थ

तस्मिन्—उसके; निवृत्ते—समाप्त हो जाने पर; उद्वाहे—विवाहोत्सव में; कालिङ्ग-प्रमुखाः—कालिंगराज इत्यादि; नृपाः—राजा; दृप्ताः—घमंडी; ते—वे; रुक्मिणम्—रुक्मी से; प्रोचुः—बोले; बलम्—बलराम को; अक्षैः—चौसर से; विनिर्जय—जीत लो; अनक्ष-ज्ञः—चौसर खेलने में पटु नहीं; हि—निस्सन्देह; अयम्—वह; राजन्—हे राजा; अपि—यद्यपि; तत्—उससे; व्यसनम्—उसके व्यसन को; महत्—महान्; इति—इस प्रकार; उक्तः—कहा गया; बलम्—बलराम को; आहूय—बुलाकर; तेन—उससे; अक्षैः—चौसर से; रुक्मी—रुक्मी; अदीव्यत—खेलने लगा।

विवाह हो चुकने के बाद कालिंगराज इत्यादि दम्भी राजाओं की टोली ने रुक्मी से कहा, ''तुम्हें चाहिए कि बलराम को चौसर में हरा दो। हे राजन्, वे चौसर में पटु नहीं हैं फिर भी उन्हें इसका व्यसन है।'' इस तरह सलाह दिये जाने पर रुक्मी ने बलराम को ललकारा और उनके साथ चौसर की बाजी खेलने लगा।

शतं सहस्रमयुतं रामस्तत्राददे पणम् ।
तं तु रुक्म्यजयत्तत्र कालिङ्गः प्राहसद्बलम् ।
दन्तान्सन्दर्शयन्नुच्चैर्नामृष्यत्तद्धलायुधः ॥ २९॥

शब्दार्थ

शतम्—एक सौ; सहस्रम्—एक हजार; अयतम्—दस हजार; रामः—बलराम; तत्र—उस (खेल) में; आददे—स्वीकार किया; पणम्—दाँव को; तम्—उस; तु—लेकिन; रुक्मी—रुक्मी; अजयत्—जीत गया; तत्र—तत्पश्चात; कालिङ्गः—कालिंग का राजा; प्राहसत्—जोर से हँस पड़ा; बलम्—बलराम पर; दन्तान्—अपने दाँत; सन्दर्शयन्—दिखाते हुए, निपोरते हुए; उच्चैः—खुलकर; न अमृष्यत्—क्षमा नहीं किया; तत्—यह; हल-आयुधः—हल धारण करने वाले, बलराम ने।

उस स्पर्धा में सर्वप्रथम बलराम ने एक सौ सिक्कों की बाजी स्वीकार की, फिर एक हजार की और तब दस हजार की। रुक्मी ने इस पहली पारी को जीत लिया तो कालिंगराज अपने सारे दाँत निपोर कर बलराम पर ठहाका मारकर हँसा। बलराम इसे सहन नहीं कर पाये।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि बाजी सोने के सिक्कों की थी। जब बलराम ने कलिंगराज के गवारू दुष्कृत्य से वे अत्यधिक क्रुद्ध हो उठे।

ततो लक्षं रुक्म्यगृह्णाद्ग्लहं तत्राजयद्बलः ।
जितवानहमित्याह रुक्मी कैतवमाश्रितः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; लक्षम्—एक लाख; रुक्मी—रुक्मी ने; अगृह्णात्—स्वीकार किया; ग्लहम्—बाजी; तत्र—उसमें; अजयत्—जीता; बलः—बलराम; जितवान्—जीत गया हूँ; अहम्—मैं; इति—इस प्रकार; आह—कहा; रुक्मी—रुक्मी ने; कैतवम्—छलावे में; आश्रितः—आश्रित।

इसके बाद रुक्मी ने एक लाख सिक्कों की बाजी लगाई जिसे बलराम ने जीत लिया। किन्तु रुक्मी ने यह घोषित करते हुए धोका देना चाहा कि ''मैं विजेता हूँ।''

मन्युना क्षुभितः श्रीमान्समुद्र इव पर्वणि ।
जात्यारुणाक्षोऽतिरुषा न्यर्बुदं ग्लहमाददे ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

मन्युना—क्रोध से; क्षुभितः—क्षुब्ध; श्री-मान्—सौन्दर्य से युक्त या सुन्दरी लक्ष्मी से युक्त; समुद्रः—समुद्र; इव—सदृश; पर्वणि—पूर्णमासी के दिन; जात्या—प्रकृति द्वारा; अरुण—लाल-लाल; अक्षः—नेत्रों वाली; अति—अत्यधिक; रुषा—क्रोध से; न्यर्बुदम्—१० करोड़; ग्लहम्—दाँव या बाजी; आददे—लगाई।

रूपवान बलराम ने जिनके लाल लाल नेत्र क्रोध से और अधिक लाल हो रहे थे, पूर्णमासी के दिन उफनते समुद्र की भाँति क्रुद्ध होकर दस करोड़ मुहरों की बाजी लगाई।

तं चापि जितवान्रामो धर्मेण छलमाश्रितः ।
रुक्मी जितं मयात्रेमे वदन्तु प्राश्निका इति ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको; च अपि—भी; जितवान्—जीत लिया; रामः—बलराम ने; धर्मेण—न्यायपूर्वक; छलम्—छल का; आश्रितः—आश्रय लेकर; रुक्मी—रुक्मी; जितम्—जीत गया; मया—मुझसे; अत्र—इस बार; इमे—ये; वदन्तु—कह दें; प्राश्निकाः—गवाह; इति—इस प्रकार।

इस बाजी को भी बलराम ने स्पष्टतः जीत लिया किन्तु रुक्मी ने फिर से छल करके यह घोषित किया, ''मैं जीता हूँ। यहाँ उपस्थित ये गवाह कहें जो कुछ उन्होंने देखा है।''

तात्पर्य : जब रुक्मी ने गवाहों से कहने के लिए कहा तो निस्सन्देह उसके मन में उसके साथी थे। किन्तु जब उसके गवाहों ने अपने छली मित्र की सहायता करनी चाही तो एक अद्भुत घटना घट गई जिसका वर्णन अगले श्लोक में हुआ है।

तदाब्रवीन्नभोवाणी बलेनैव जितो ग्लहः ।

धर्मतो वचनेनैव रुक्मी वदति वै मृषा ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

तदा—तब; अब्रवीत्—कहा; नभः—आकाश में; वाणी—शब्द; बलेन—बलराम द्वारा; एव—निस्सन्देह; जितः—जीती गई; ग्लहः—बाजी; धर्मतः—न्यायपूर्वक; वचनेन—शब्दों से; एव—निश्चय ही; रुक्मी—रुक्मी; वदति—कहता है; वै—निस्सन्देह; मृषा—झूठ।

तभी आकाशवाणी हुई ''इस बाजी को बलराम ने न्यायपूर्वक जीता है। रुक्मी निश्चित रूप से झूठ बोल रहा है।''

तामनादृत्य वैदर्भो दुष्टराजन्यचोदितः ।
सङ्कर्षणं परिहसन्बभाषे कालचोदितः ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

ताम्—उस (वाणी) को; अनादृत्य—अनादर करके; वैदर्भः—विदर्भ का राजकुमार, रुक्मी; दुष्ट—दुष्ट; राजन्य—राजाओं द्वारा; चोदितः—प्रेरित, उभाड़ा गया; सङ्कर्षणम्—बलराम की; परिहसन्—हँसी उड़ाते हुए; बभाषे—बोला; काल—समय के बल से; चोदितः—प्रेरित।

दुष्ट राजाओं द्वारा उभाड़े जाने से रुक्मी ने इस दैवी वाणी की उपेक्षा कर दी। वस्तुतः साक्षात् भाग्य रुक्मी को प्रेरित कर रहा था अतः उसने बलराम की इस तरह हँसी उड़ाई।

नैवाक्षकोविदा यूयं गोपाला वनगोचराः ।
अक्षैर्दीव्यन्ति राजानो बाणैश्च न भवादृशाः ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; एव—निस्सन्देह; अक्ष—चौसर खेलने में; कोविदाः—दक्ष; यूयम्—तुम; गोपालाः—ग्वाले; वन—जंगल में; गोचराः—गाय चराते हुए; अक्षैः—चौसर से; दीव्यन्ति—खेलते हैं; राजानः—राजा लोग; बाणैः—बाणों से; च—तथा; न—नहीं; भवादृशाः—आप जैसे।

[रुक्मी ने कहा] : तुम ग्वाले तो जंगलों में घूमते रहते हो चौसर के बारे में कुछ भी नहीं जानते। चौसर खेलना और बाण चलाना तो एकमात्र राजाओं के लिए हैं, तुम जैसों के लिए नहीं।

रुक्मिणैवमधिक्षिप्तो राजभिश्चोपहासितः ।
क्रुद्धः परिघमुद्यम्य जघ्ने तं नृम्णसंसदि ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

रुक्मिणा—रुक्मी द्वारा; एवम्—इस प्रकार; अधिक्षिप्तः—अपमानित; राजभिः—राजाओं द्वारा; च—तथा; उपहासितः—मजाक उड़ाया गया; क्रुद्धः—क्रुद्ध; परिघम्—अपनी गदा को; उद्यम्य—उठाकर; जघ्ने—मार डाला; तम्—उसको; नृम्ण-संसदि—उस शुभ सभा में।

इस प्रकार रुक्मी द्वारा अपमानित करने तथा राजाओं द्वारा उपहास किये जाने पर बलराम

का क्रोध भड़क उठा। उन्होंने शुभ विवाह की सभा में ही अपनी गदा उठाई और रुक्मी को मार डाला।

कलिङ्गराजं तरसा गृहीत्वा दशमे पदे ।
दन्तानपातयत्क्रुद्धो योऽहसद्विवृतैर्द्विजैः ॥ ३७॥

शब्दार्थ

कलिङ्ग-राजम्—कलिंग के राजन् को; तरसा—तेजी से; गृहीत्वा—पकड़ कर; दशमे—उसके दसवें; पदे—पग (भागते हुए) पर; दन्तान्—उसके दाँतों को; अपातयत्—तोड़ डाला; क्रुद्धः—क्रुद्ध; यः—जो; अहसत्—हँसा था; विवृतैः—खुले हुए; द्विजैः—दाँतों से।

कलिंग के राजन् ने, जो बलराम पर हँसा था और जिसने अपने दाँत निपोरे थे, भागने का प्रयास किया किन्तु क्रुद्ध बलराम ने तेजी से उसे दसवें कदम में ही पकड़ लिया और उसके सारे दाँत तोड़ डाले।

अन्ये निर्भिन्नबाहूरुशिरसो रुधिरोक्षिताः ।
राजानो दुद्रुवुर्भीता बलेन परिघार्दिताः ॥ ३८॥

शब्दार्थ

अन्ये—अन्य; निर्भिन्न—टूटे; बाहु—भुजाएँ; ऊरु—जाँघें; शिरसः—तथा सिरों वाले; रुधिर—रक्त से; उक्षिताः—सने; राजानः—राजागण; दुद्रुवुः—भागे; भीताः—डरे हुए; बलेन—बलराम द्वारा; परिघ—अपनी गदा से; अर्दिताः—चोट खाकर।

बलराम की गदा से चोट खाकर अन्य राजा भय के मारे भाग खड़े हुए। उनकी बाहें, जाँघें तथा सिर टूटे थे और उनके शरीर रक्त से लथपथ थे।

निहते रुक्मिणि श्याले नाब्रवीत्साध्वसाधु वा ।
रुक्मिणीबलयो राजन्स्नेहभङ्गभयाद्धरिः ॥ ३९॥

शब्दार्थ

निहते—मारे जाने पर; रुक्मिणि—रुक्मी के; श्याले—उसके साले; न अब्रवीत्—नहीं कहा; साधु—अच्छा; असाधु—बुरा; वा—अथवा; रुक्मिणी-बलयोः—रुक्मिणी तथा बलराम के; राजन्—हे राजा; स्नेह—स्नेह; भङ्ग—टूटने के; भयात्—भय से; हरिः—भगवान् कृष्ण ने।

हे राजन्, जब भगवान् कृष्ण का साला मार डाला गया तो उन्होंने न तो इसे सराहा न ही विरोध प्रकट किया। क्योंकि उन्हें भय था कि रुक्मिणी या बलराम से स्नेह-बन्धन बिगड़ सकते हैं।

ततोऽनिरुद्धं सह सूर्यया वरं
रथं समारोप्य ययुः कुशस्थलीम् ।
रामादयो भोजकटाद्दशार्हाः
सिद्धाखिलार्था मधुसूदनाश्रयाः ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; अनिरुद्धम्—अनिरुद्ध को; सह—साथ; सूर्यया—उसकी पत्नी के; वरम्—दूल्हा; रथम्—रथ पर; समारोप्य—बैठाकर; ययुः—वे चले गये; कुशस्थलीम्—कुशस्थली (द्वारका); राम-आदयः—बलराम इत्यादि; भोजकटात्—भोजकट से; दशार्हाः—दशार्हवंशी; सिद्ध—पूर्ण; अखिल—समस्त; अर्थाः—कार्य; मधुसूदन—भगवान् कृष्ण के; आश्रयाः—शरणागत।

तब बलराम इत्यादि दशार्हों ने अनिरुद्ध तथा उसकी पत्नी को एक सुन्दर रथ में बैठा लिया और भोजकट से द्वारका के लिए प्रस्थान कर गये। भगवान् मधुसूदन की शरण ग्रहण करने से उनके सारे कार्य पूर्ण हो गये।

तात्पर्य : यद्यपि रुक्मिणी समस्त दशार्हों को अतीव प्रिय थीं किन्तु उनका भाई रुक्मी रुक्मिणी के विवाह के समय से ही कृष्ण का निरन्तर विरोध और अपमान करता रहता था। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि इसी कारण से कृष्ण के संगियों को रुक्मी की आकस्मिक मृत्यु से कोई संताप नहीं हुआ।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''बलराम द्वारा रुक्मी का वध'' नामक इकसठवें अध्याय का श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत शिष्यों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।